उपरोक्त समकीकरण में (NRxY) की मात्रा किसी उपज विषेष के लिये पौधों द्वारा शोषित की जाने वाली कुल तत्वों की मात्रा को प्रदर्षित करती है। इस मात्रा के तुल्य उर्वरक मात्रा ज्ञात करने के लिये (NRxY) गुणनफल को उर्वरक उपयोग क्षमता (Ef) सें विभाजित करने पर हमें लक्षित उपज समीकरण प्राप्त हो जाता है।

$$FN = NR \times Y / Ef - STV \times Es / Ef \quad \text{---------(3)}$$

उपरोक्त समीकरण 3 को निम्न तरह पुर्नव्यवस्थित किया जा सकता है।

$$FN = (NR / Ef) \times Y - (Es / Ef) \times STV \quad \text{------- (4)}$$

समीकरण (4) की NR/Ef तथा Es/Ef मात्रायें अनुसंधान प्रयोगषाला द्वारा उपलब्ध कराई जाती है। समीकरण का बायॉ भाग किसी उपज विषेष के लिये कुल तत्व की मात्रा उर्वरक के रूप में बताता है तथा दाहिना भाग मृदा से प्राप्त होने वाले तत्व की मात्रा उर्वरक के रूप में प्रदर्षित करता है। इन दोनों का अन्तर तत्व की वह मात्रा होती है जिसे उर्वरक के रूप

में सिफारिष किया जाना है। इस तरह मृदा परीक्षण प्रयोगषाला में मृदा का परीक्षण कर STV मात्रा ज्ञात कर ली जाय तथा यदि लक्षित उपज का निर्धारण कृषक की आर्थिक अवस्था के आधार पर किया जाय तो उपरोक्त समीकरण से मृदा परिक्षण आधारित उर्वरक सिफारिष की जा सकती है। विभिन्न फसलों एवं मृदाओं के लिये उपयोगी समीकरण सारणी में दिये गये है इनमें विभिन्न मृदा परीक्षण मात्रा एवं उपज के लिये उर्वरकों की मात्रा की गणना की जा सकती है।

सारणी : विभिन्न फसलों के लिये उपयोगी लक्षित उपज समीकरण

फसल	मृदा उर्वरक	उर्वरक समीकरण
धान (भगवती)		FN = 5.01 T – 0.32 SN - 0.72CN FP_2O_5 = 1.54 T – 1.23 SP_2O_5-0.17 CP_2O_5 FK_2O = 1.91T – 0.21 SK_2O -0.29CK_2O
गेहूँ (एच.डी. 2733)		FN = 7.98 T – 0.69 SN - 0.75 CN FP_2O_5 = 1.52 T – 1.29 SP_2O_5-0.22 CP_2O_5 FK_2O = 1.80 T – 0.34 SK_2O -0.22 CK_2O
मक्का (देवकी)		FN = 4.12 T – 0.39 SN - 0.70 CN FP_2O_5 = 0.74 T – 1.26 SP_2O_5-0.30 CP_2O_5 FK_2O = 1.20 T – 0.25 SK_2O -0.16CK_2O
सरसों (सी.भी. क्रांति)		FN = 6.45 T – 0.20 SN - 0.30 CN FP_2O_5 = 2.16 T – 1.42 SP_2O_5-0.34 CP_2O_5 FK_2O = 2.78 T – 0.10 SK_2O -0.50CK_2O

T = लक्षित उपज क्विं/हे.	FN = उर्वरक नेत्रजन, FP_2O_5 = उर्वरक स्फूर कि.ग्रा./हे. FK_2O = उर्वरक पोटाष कि.ग्रा./हे.
SN = नेत्रजन की मृदा परीक्षण मात्रा कि.ग्रा./हे. S P_2O_5 = स्फूर की मृदा परीक्षण मात्रा कि.ग्रा./हे. SK_2O = पोटाष की मृदा परिक्षण मात्रा कि.ग्रा./हे.	CN = कम्पोस्ट नेत्रजन की मात्रा प्रतिषत C P_2O_5= कम्पोस्ट स्फूर की मात्रा प्रतिषत SK_2O = कम्पोस्ट पोटाष की मात्रा प्रतिषत

अध्याय–7

कृषि अर्थशास्त्र

7.1 कृषि क्षेत्र की प्रमुख आर्थिक समस्यायें

बिहार की भौगोलिक संरचना मुख्यतः उत्तर एवं मध्य बिहार के क्षेत्र को मिलाकर बनता है। यह क्षेत्र मुख्य रूप से गंगा का मैदानी क्षेत्र है जो गंगा के उत्तर एवं दक्षिण में है। यही गंगा की धारा उत्तर एवं दक्षिण बिहार को दो भागों में विभक्त करती है। उत्तरी बिहार का मैदान हिमालय पर्वत की तराई में है एवं कई नदियाँ जैसेः– घाघरा, गण्डक, बागमती, बुढ़ी गण्डक एवं कोषी नदियों का क्षेत्र कहलाता है जो समतल है। गंगा नदी के दक्षिणी किनारे से झारखण्ड राज्य के पठार तक दक्षिणी बिहार फैला हुआ है जो साधारणतः समतल है सिर्फ पहाड़ी इलाकों को छोड़कर। गंगा के दोनो हिस्से उत्तरी एवं दक्षिणी क्षेत्रों की मिट्टी काफी उपजाऊ है एवं क्षेत्र में अनुकूल जलवायु, सिंचाई की सुविधा वर्षा की पर्याप्तता एवं मेहनती लोगों के कारण कृषि एवं पशुपालन यहाँ का सबसे महत्वपूर्ण व्यवसाय है।

बिहार एक कृषि प्रधान राज्य है। कृषि की प्रधानता सबसे अधिक राज्य के उत्तरी मैदानी भागों में है जहाँ करीब 75 फीसदी भूमि पर कृषि का कार्य किया जाता है। इस क्षेत्र के गण्डक एवं कोसी में सघन कृषि कार्य के अन्तर्गत प्रतिवर्ष कई फसलों को बोआ जाता है। इन क्षेत्र में वर्षा काल में भदई, वसन्त काल मे जायद, ग्रीष्म काल में गरमा और रबी में गेहुँ आदि फसलों की पैदावार होती है। कृषि के मामले में दक्षिण (मध्य) बिहार ज्यादा उन्नत है एवं उत्तर बिहार अधिक उन्नत होने के वावजूद अभी भी काफी पिछड़ा हुआ है।

इस तरह उपर्युक्त आधार पर यह कहा जा सकता है बिहार राज्य एक अत्यधिक कृषि प्रधान राज्य है एवं कृषि ही इस राज्य की सबसे प्रमुख आर्थिक क्रियाओं का केन्द्र है और मुख्य जीविका का साधन भी है। बिहार सरकार (2012) के अनुसार खेती राज्य के विकास में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि यहाँ 60 प्रतिषत जमीन पर खेती होती है । बिहार राज्य का कुल क्षेत्रफल 93.60 लाख हे0 है एवं जनसंख्या करीब 10.41 करोड़ है। स्वाभाविक रूप से जनसंख्या का घनत्व बहुत अधिक है 1106 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर । प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता मात्र 0.089 हेक्टेयर है । विगत कई दषकों से भूमि पर आबादी का भार यूँ ही बढ़ रहा है जिससे राज्य के विकास पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ रहा है । साधारण शब्दों में कहा जा सकता है कि जनसंख्या के बढ़ते बोझ के कारण कृषि क्षेत्र में बेरोजगारी बढ़ रही है एवं प्रति व्यक्ति कृषि उत्पादन दर में भी कमी होती जा रही है जिससे राज्य का कृषि पिछड़ता जा रहा है । कृषि कार्यो में लगे लोगो की आय निरन्तर कम होती जा रही है एवं गरीबी की मात्रा दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। चूँकि कृषि और उद्योग के बीच प्रर्याप्त संतुलन नहीं है इसलिए अर्थव्यवस्था राज्य का तेजी से नहीं बढ़ पा रहा है। आज भी अधिकतर किसान बहुत अधिक मात्रा में अनाज (धान, गेहूँ , मक्का) की खेती 83 प्रतिषत क्षेत्र में करते हैं जबकि सब्जियाँ दलहन, तिलहन, फल और फूल की खेती मात्र (17 प्रतिषत) क्षेत्र में ही करते है । सिंचाई के पानी के अच्छे स्रोतों के बाबजूद सिंचाई की कमी है इस वजह से हर साल मॉनसून के उतार–चढ़ाव के कारण फसलों की पैदावार बढ़ती घटती रहती है । इसी कारण से गाँवों में आज भी खाद्य असुरक्षा व्याप्त है ।

कृषकों के पास काफी छोटे–छोटे खेत है जो एक स्थान पर न होकर इधर–उधर फैले हुए है जिससे उन्नत खेती एवं कृषकों की कार्यक्षमता प्रभावित होती है एवं उत्पादन एवं उत्पादकता कम है। प्रदेष के किसान आज भी बहुत बड़े पैमाने पर अषिक्षित, रूढ़िवादी एवं पुरानी पद्वति से खेती करते है जिससे भूमि का पूर्ण उपयोग नही हो पाता । बहुत सारे किसान तो आधुनिक पद्वति को कृषि में प्रयोग से डरते है साथ ही साथ उनको धन (पूँजी) का भी अभाव होता है जिसके कारण भी आधुनिक पद्वति को अजमाने में असमर्थ रहते है । गाँवों के अधिकतर किसान उत्तम बीज का प्रयोग नहीं करते जिससे उनका उत्पादकता कम होता है । सही समय पर अच्छी एवं प्रर्याप्त खाद

का भी प्रायः अभाव रहता है जो अच्छा पैदावार नहीं होने का कारण है।रूढ़ीवादिता के कारण फसलों में लगे हुए कीड़े को मारना वे पाप समझते हैं एवं भगवान भरोसे रहते हैं। कृषि के पीछड़े होने का सबसे महत्वपूर्ण कारणहै कि आज भी अधिकांष छोटे किसान ऋण में ही जन्म लेते है, ऋण में ही जीवित रहते हैं और ऋण में ही मर जाते हैं। यातायात का साधन भी उतना अच्छा नहीं है जिससे कृषि उत्पाद शहर तक लाने में बहुत खर्चीला हो जाता है। व्यवस्थित एवं नियमानुकूल बजार अभाव के चलते भी किसानों को उत्पादन एवं लाभ में कोई खास योगदान नहीं हो पाता है और राज्य के आर्थिक विकास पर प्रतिकुल प्रभाव डालता है। नदियों के प्रचुरता के कारण प्रति वर्ष बाढ़ के चलते भी खेती एवं जानमाल को नुकसान उठाना पड़ता है। प्रदेष के करीब 68 प्रतिषत जिले बाढ़ प्रभावित है। सुखाड़ भी खेती के लिए एक अभिषाप है क्योंकि करीब 50 प्रतिषत जिले राज्य के सुखाड़ प्रभावित है जहाँ करीब–करीब प्रत्येक वर्ष कम या अधिक मात्रा में सुखाड़ पड़ता ही है जो आर्थिक दृष्टिकोण से राज्य के पिछड़ेपन होने का कारण है । कृषि बीमा का साधारणतः अभाव रहने के कारण किसान बाढ़ एवं सुखाड़ के डर से बहुत कम मात्रा में उन्नत बीज, खाद, कीटनाषी आदि का प्रयोग करते हैं जिससे उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है ।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि राज्य के विकास में खेती सबसे महत्वपूर्णभूमिका निभाती है पर अनेकों समस्यायें होने के कारण कृषि क्षेत्र का विकास जितना तेज गति से होना चाहिए उतना तेज गति से नहीं हो पा रहा है। इसका प्रमुख कारण जनसंख्या में निरंतर तेजी से वृद्धि (25.42 प्रतिषत), प्रति दस वर्षो में जोत के आकार का निरंतर छोटा होना, रहन–सहन के मामले में किसानों का निम्न स्तर, कृषि में प्रर्याप्त नियमन का अभाव, वैज्ञानिक अनुसंधानों का अपर्याप्त विकास, वित्तीय संकट आदि कृषि क्षेत्र की आज भी प्रमुख आर्थिक समस्यायें हैं। अर्थात आने वाले समय में उपयुक्त समस्यायों से निपटना होगा एवं उबरना होगा जिससे कि कृषि क्षेत्र में त्वरीत गति से विकास हो सके। राज्य के भौगोलिक संरचना के अनुरूप कृषि आधारित उद्योगों के विकास के लिए रणनीति भी तैयार करनी होगी जिससे की कृषि एवं कषकों को अनुमानित लाभ पहुँचाया जा सके एवं राज्य की अर्थव्यवस्था में सुधार (उन्नति) लाया जा सके ।

7.2 बिहार राज्य के आर्थिक विकास में कृषि का भागीदारी

कृषि समस्त उद्योगों की जननी है । बिहार राज्य पूर्णतः कृषि प्रमुख है क्योंकि इस राज्य का प्रमुख व्यवसाय कृषि है। खनिज को छोड़कर राज्य के पास प्र्याप्त मात्रा में प्राकृतिक संसाधन एवं मानव पूँजी है। पिछले दषकों में बिहार के कृषि का विकास हुआ है पर धीमी गति से लेकिन वर्त्तमान दषक में यह तेजी से विकास की ओर अग्रसर है एवं कृषि विकास दर करीब 20 से 30 प्रतिषत है एवं औसत भू–सिंचित क्षेत्र लगभग 50 प्रतिषत है। कृषि द्वारा राजकीय सकल उत्पाद करीब 40 प्रतिषत है। आर्थिक विकास में कृषि का भागीदारी को कई भागों में जैसे श्रमशक्ति की कृषि में भागीदारी, कृषि क्षेत्र मे कृषिगत उत्पादों की वृद्वि एवं उत्पादकता की भूमिका, व्यापार सम्बन्धों द्वारा बाजारीय भागीदारी आदि है जिससे कि यह स्पष्ट हो सकता है कि वास्तव में आर्थिक विकास में कृषि की भागीदासरी प्रमुख रूप से है। निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत हम आर्थिक विकास में कृषि का भागीदारी को समझ सकते हैं।

1. **कच्चे माल की आपूर्ति :–** कृषि क्षेत्र विभिन्न उद्योगों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति करता है। अगर राज्य का कृषि पिछड़ा हुआ है तो औद्योगिक क्षेत्र में कच्चे माल की जरूरत के अनुसार आपूर्ति नही कर पायेगा जिससे उद्योगों का विकास मन्द होगा और आर्थिक विकास की दर नीची बनी रहेगी। इस तरह आर्थिक विकास के लिए कृषि का विकसित होना आवष्यक है। कृषि औद्यौगिक विकास की आधार षिला है और कृषि उत्पादन औद्योकरण के लिए मूलभूत कार्यषील पूँजी है '' (प्रो0रास्टोव)
2. **श्रमषक्ति उपलब्ध कराना:–** कृषि क्षेत्र उद्यागों को श्रमशक्ति उपलब्ध कराता है । जब कृषि का विकास होता है, कृषि में तकनीकी प्रगति से कृषि क्षेत्र में उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ती है तब वर्त्तमान जनसंख्या को खाद्य सामग्री उपलब्ध कराने के लिए कृषि क्षेत्र में पहले की अपेक्षा कम श्रमिकों की आवष्यकता पड़ती है।

फलस्वरूप कृषि क्षेत्र में लगा श्रमषक्ति का एक बड़ा भाग अन्य व्यवसायों के लिए मुक्त हो जाता है। बिहार में करीब 75 प्रतिषत श्रमिक रोजगार के लिए कृषि पर निर्भर है जबकि पुरे भारत में औसतन 55 प्रतिषत।

3. पूँजी निर्माणः– राज्य पिछड़ा है इसलिए पूँजी की कमी है। इसके कारण विनिर्मात्री उद्योगों की स्थापना जिसके लिए भारी मात्रा में पूँजी निवेष की जरूरत होती है उसका पूर्ति नहीं कर पाता है। इस स्थिति में कृषि क्षेत्र पूँजी निर्माण में दो तरह से सहायक सिद्ध होता है। पहला कृषि उत्पादकता में वृद्वि के फलस्वरूप कृषि क्षेत्र की आय बढ़ जाने से बचत करने की क्षमता का विस्तार होता है एवं दूसरा कृषि में कम पूँजी प्रधान उपायों का प्रयोग करके उत्पादकता में वृद्वि की जा सकती है। इस तरह कृषि क्षेत्र में जीवन–स्तर को कम किए बिना ही पूँजी निर्माण के लिए साधन प्राप्त किए जा सकते हैं ।

4. औद्योगिक माल के लिए बाजार उपलब्ध कराना जिससे कृषि का विकास होता है तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है तथा कषकों की आय बढ़ती है । कषकों की आय बढ़ने से औद्योगिक वस्तुओं की माँग स्वतः बढ़ने लगती है जिससे औद्योगिक क्षेत्र का विस्तार होता है और राज्य उन्नति के पथ पर अग्रसर होता है। बिहार राज्य में औद्योगिक विकास की गति धीमी है।

5. निर्यात क्षमता में बढ़ोतरी के लिए कृषि का विकास एवं विस्तार जरूरी है। आर्थिक विकास के लिए विदेषों से पूँजीगत वस्तुओं के आयात के लिए भारी मात्रा में विदेषी विनिमय की आवष्यकता होती है जो कृषि क्षेत्र के विकास के कारण अधिक मात्रा में विदेषी विनिमय का अर्जन किया जा सकता है। यहाँ पर बहुत ऐसे कृषि पदार्थ है जिसका निर्यात सम्भव है पर कई कारणों से निर्यात नहीं हो पा रहा है ।

6. राज्य की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए प्रर्याप्त मात्रा में खाद्य–पदार्थो को उपलब्ध कराने में कृषि मुख्य रूप से योगदान करता है। जनसंख्या वृद्धि दर अधिक होने के कारण खाद्यान की माँग तेजी से बढ़ती है। इनके अनुरूप खाद्य सामग्री की अगर आपूर्ति नहीं करता है तो स्फीतिक दबाव बढ़ने लगता है और लोगों का जीवन स्तर निरंतर गिरने लगता है जिससे विकास अवरूद्ध हो जाता है । अन्ततः राज्य के आर्थिक विकास का ढ़ाँचा चरमरा जाता है। बिहार राज्य में जनसंख्या वृद्वि दर बहुत है जिससे कृषि पर व्यक्ति का दवाब बढ़ा हुआ है ।

7. रोजगार के अवसरों का सृजन करने में भी कृषि क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण योग्यदान होता है। कृषि क्षेत्र प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अधिकांष जनसंख्या के लिए रोजगार के अवसरों का सृजन भी करता है । जनसंख्या में वृद्धि होने के साथ–साथ तदनुरू औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार के अवसरों में समानान्तर वृद्धि न होने के कारण कृषि क्षेत्र को उत्तरोतर अधिक जनसंख्या के लिए रोजगार के अवसर जुटाने होते हैं। कृषि क्षेत्र में विकास हेतु कम पूँजी की आवष्यकता होती है । राज्य की अर्थव्यवस्था पिछड़े होने के कारण बहुतायत जनसंख्या कृषि क्षेत्र से अपनी आजीविका चलाती है और अगामी जनसंख्या के लिए कृषि एवं सम्बन्धित क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का सृजन अधिक से अधिक करने की कोषिष करती है । बिहार के आर्थिक विकास में आज भी कृषि एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। कृषि की समृद्वि से ही राज्य की अर्थ व्यवस्था में समृद्वि सम्भव है । भारत का कोई भी ऐसा नहीं है जिसका कृषि में इतना प्रत्यक्ष सीधा एवं घनिष्ठ स्वार्थ निहित है । राज्य की आय में कृषि क्षेत्र 16 प्रतिषत योगदान पुरे जी0डी0पी0 में करता है । इस प्रदेष में चीनी उद्योग, वस्त्र उद्योग, तेल उद्योग, दाल उद्योग आदि की असीम संम्भावनाएँ है क्योंकि इस राज्य के पास कच्चे माल की प्रचुरता है फिर भी उद्योग सफल नहीं है इस राज्य में । इससे राज्य को न प्रत्यक्ष आय हो रहा है न ही रोजगार का सृजन। फिर भी कृषि राज्य को वितीय पूर्ति में काफी मदद करता है ।

7.3 भूमि उपयोग का वर्गीकरण

बिहार का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 93.59 लाख हेक्टेयर है । भूमि के संदर्भ में प्राप्त आंकड़ों के अनुसार 2009–10 में कुल भौगोलिक क्षेत्र का कितना–कितना भाग किन–किन उपयोगों में काम आ रहा है, कितने क्षेत्र में वन फैले हुये हैं, कृषि कार्यों में प्रयुक्त क्षेत्र कितना है, खेती के लिए अनुपलब्ध अथवा अनुपयुक्त ऊसर और वंजर भूमि कितनी है, वृक्षों और बगीचो वाली भूमि कितनी है, कितनी भूमि चारागाहों में काम आ रही है, परती भूमि

कितनी है, कितनी और भूमि को कृषि योग्य बनाया जा सकता है, कुल कितने क्षेत्र में खेती की जा रही है आदि बातों की जानकारी भूमि उपयोग समेकों से मिलती है ।

बिहार में भूमि उपयोग

विवरणी भूमि के उपयोग का	2009–10	2012–13	2009.10	2012.13
कुल भोगोलिक क्षेत्रफल (हे0)	9359568	9359570	100	100
वन क्षेत्र	616446	621640	6.59	6.60
कृषि के लिये अनुपलब्ध				
गैर कृषि उपयोग में	1616109	1702540	17.23	18.20
ऊसर तथा कृषि आयोग्य	436803	431720	4.67	4.60
कृषि योग्य वंजर भूमि	50579	45236	0.54	0.50
परती भूमि				
चालू परती भूमि	632301	781260	6.76	8.3
अन्य परती भूमि	152120	121170	1.63	1.3
परती के अतिरिक्त अन्य भूमि				
स्थाई चरागाह एवं गोचर भूमि	19227	15706	0.29	0.2
विविध वृक्ष, फसलें एवं गाछी	233007	244570	2.49	2.60
कुल नहीं बोया गया भूमि	3756592	3963830	40.20	42.40
बोया गया क्षेत्रफल				
शुद्व बोया गया क्षेत्रफल	5603205	5395750	59.80	57.60
एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल	2543230	2251032	–	–
फसलों की तीव्रता प्रतिषत में	1.37	142	–	–

स्रोतः सांख्यिकी एवं मूल्यांकन निदेषालय, बिहार, पटना

वन क्षेत्र

बिहार में वन क्षेत्र कुल भोगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 6.59 प्रतिषत है। वन भूमि घास, बाँस तथा अन्य पेड़–पौधों से भरी रहती है। वनों में कृषि योग्य भूमि बनाने के लिए भूमि पर उगे पेड़–पौधों, घासों एवं झाड़ियों को साफ करना आवष्यक होता है जिस पर बड़ी मात्रा में धन व्यय करना पड़ता है, लेकिन वनों की अपनी उपयोगिता है। कम से कम कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 33 प्रतिषत वन भूमि होना चाहिए। इससे जलवायु को सम बनाने तथा वर्षा होने में सहायता मिलती है। कृषि क्षेत्र में वनों का बहुत महत्व एवं उपयोगिता है। वनों से हमें विभिन प्रकार की लकड़ी, इंधन कागज एवं लाख के लिए कच्चे माल की प्राप्ति होती है।

खेती के लिये अनउपलब्ध भूमिःइसे तीन भागों में बाँट कर रखा जा सकता है–कृषि उपयोग में ऊसर, कृषि अयोग्य एवं बंजर भूमि। इस तरह के भूमि का अभिप्राय इमारतों, सड़कों, रेलों झीलों और नदियों से घिरी भूमि से होता है । सड़कों के विस्तार, नगरीकरण की बढ़ती हुई प्रवृति आदि कारणों से यह क्षेत्र बढ़ रहा है । ऊसर और बंजर भूमि का अभिप्राय पहाड़ से है जिन्हें कृषि कार्य में लाना अनार्थिक होता है ।

अन्य (परती भूमि छोड़कर) :इस तरह के भूमि का उपयोग कृषि अथवा वनारोपण के विस्तर की सम्भावनाओं को जाहिर करता है । इन भूमि पर खेती करने में बहुत अधिक लागत लगाना पड़ता है । इस तरह के भूमि का तात्पर्य खेती की भूमि का विस्तार के सम्भावनाओं को व्यक्त करता है ।

परती भूमिःइस तरह का भूमि जिसे पुनः उर्वरा शक्ति के द्वारा खेती योग्य बनाया जा सकता है । चालू परती भूमि एक वर्ष अवधी तक होती है, जबकि 1 से 5 वर्ष तक परती भूमि को अन्य परती भूमि के श्रेणी में रखा जाता है । इस तरह की भूमि का कारण किसानों की निर्धनता, अपर्याप्त जल–पूर्ति, नम जलवायु, नदियों और नहरों में बालू एकत्रित हो जाना, अलाभप्रद खेती आदि के कारण भूमि परती छोड़ दी जाती है।

कृषि क्षेत्रःयह भूमि का वह क्षेत्र है जहाँ कृषि कार्य के लिए उपयोग किया जाता है । राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र मे से कूल नही बोया गया भूमि घटाने पर जो भूमि बचता है वहशुद्व बोया गया क्षेत्रफल कहलाता है । सालभर में जितनी बार मौसम के अनुसार ष्शुद्व बोया गया क्षेत्र पर खेती होती है उसे फसलों की तीव्रता कहते है ।

भूमि उपयोग को प्रभावित करने वाले कारक (फैक्टर)

भूमि के उपयोग को प्रभावित करने वाले मुख्यशक्तियाँ है :

1. भौतिक रूप से जलवायु , भूमि की सतह एवं मिट्टी की किस्में आदि।
2. जनसंख्या का घनत्व–प्रति व्यक्ति भौगोलिक एवं कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता प्रभावित करता है।
3. कृषक पहले अपनी जरूरत के हिसाब से खेती करते थे लेकन अब बजार के जरूरत के हिसाब से खेती करते है इससे भी भूमि का उपयोग प्रभावित होता है।
4. दिन प्रतिदिन तकनीकी ज्ञान बढ़ने के कारण औद्यौगिक विकास को बढ़ावा मिल रहा है जिससे गैर–कृषि कार्य के लिए भूमि का उपयोग बढ़ रहा है ।
5. वर्षा का कम एवं अधिक होना ।
6. वर्षा का उचित समय पर नहीं होना ।
7.

7.4 भूमि वितरण एवं औसत जोत का आकार

बिहार में कृषि भूमि छोटे–छोटे टुकड़ों में बटी है व जोतों का आकार भूमि पर जनसंख्या के दबाब के चलते निरंतर छोटा से छोटा होता जा रहा है । आज भी इस राज्य में भूमि वितरण का स्वरूप एक समस्या है । चूँकि भूमि का क्षेत्रफल सीमित है इसलिए इसकी पूर्ति में कोई खास अन्तर नहीं होता है बल्कि विभाजन में लोच है। विभिन्न श्रेणी के किसानों के पास अलग–अलग प्रकार के जोत के आकार है एवं इसके वितरण में भी बहुत विषमता है । भूमि वितरण का विवरण सारणी में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारणीः बिहार राज्य में जोतों की संख्या एवं क्षेत्रफल किसान के वर्ग के अनुसार

आकार समूह	किसान का वर्ग	जोतों की संख्या		प्रतिशत	
		वर्ष2005–06	वर्ष 2011–12	2005–06	2011–12
		जोतों की सं0हजार में			
1.0 हे0 तक	सीमांत किसान	13180	14703	89.90	90.80
1.0से 2.0 हे0तक	लघु किसान	978	948	6.7	5.9
2.0से 4.0 हे0तक	अर्द्व मध्यम किसान	415	438	2.8	2.7

4.0से10.0हे0 तक	मध्यम किसान	81	98	0.6	0.6
10.0हे0एवं अधिक	वृहत किसान	3	3	0.1	0.9
योग	सभी वर्ग	14657	16191	100.0	100.0

स्रोतःकृषि गणना 2011–12 भारत सरकार

उपर्युक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि राज्य में सीमांत किसान करीब 90.0 प्रतिषत है जिनके जोतों का आकार 1 हेक्टेयर से कम है । इनका प्रतिषत पाँच सालों में और भी बढ़ गया है। इसी तरह लघु किसान जो 2.0 से कम जोत रखते हैं राज्य में 6.7 प्रतिषत है जो पिछले पाँच वर्षो में घटे हैं । बाकी के किसान वर्ग जैसे 2005–06 में थे वैसे ही 2011–12 में है यानि इनके जोतों का आकार स्थिर है ।

सारणीः बिहार राज्य में जोतों की क्षेत्रफल किसान वर्ग के अनुसार (क्षेत्रफल हजार हेक्टेयर)

आकार समूह	किसान वर्ग	जोतो का क्षेत्रफल		जोतो का प्रतिषत	
		वर्ष 2005–06	वर्ष 2011–12	2005–06	2011–12
1.0 हे0 तक	सीमांत किसान	3494	3488	55.90	54.60
1.0 से 2.0 हे0तक	लघु किसान	1224	1186	19.6	18.6
2.0 से 4.0 हे0तक	अर्द्व मध्यम किसान	1073	1135	17.20	17.80
4.0से 10.0 हे0 तक	मध्यम किसान	415	505	6.6	7.9
10.0 हे0 एवं अधिक	वृहत किसान	45	74	0.7	1.2
योग	सभी वर्ग	6251	6388	100.0	100.00

स्रोतःकृषि गणना 2011–12 भारत सरकार

उपर्युक्त सारणी से यह देखा जा सकता है कि राज्य में कुल कृषि में से करीब 55 प्रतिषत भूमि सीमांत किसान वर्ग के पास है । उसके बाद लघु किसान वर्ग करीब 18–19 प्रतिषत, अर्द्व किसान वर्ग के पास 17 प्रतिषत से कुछ अधिक, मध्यम किसान के पास करीब 7 से 8 प्रतिषत एवं वृहत के पास केवल 1 प्रतिषत ही खेती की भूमि है।

भूमि पर जनसंख्या के बढ़ते हुए दवाब के कारण जोतों का बंटवारा हो रहा है। फलः जोतों का संख्या 2005–06 से 2011–12 में बढ़ गई है। इस अवधि में सीमांत कृषकों की संख्या का प्रतिषत में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज किया है । इस अवधि में सीमांत किसानों के कुल बोये हुए क्षेत्रफल में कमी हुई है जबकि अर्द्व मध्यम किसान वर्ग में मामूली वृद्धि क्षेत्रफल में हुआ है ।

बिहार राज्य में प्रत्येक होल्डिंग (जोत) का औसत क्षेत्रफल हेक्टेयर में नीचे दर्षाया जा रहा है ।

सारणीः बिहार राज्य में औसत होल्डिंग (जोत) का क्षेत्रफल हेक्टेयर में ।

खेतों का आकार एवं वर्गीकरण (हेक्टेयर)	औसत क्षेत्रफल हेक्टेयर में		भारत
	2005–06	2011–12	
सीमांत किसान (0–1)	0.26	0.24	0.39
लघु किसान (1–2)	1.25	1.25	1.43
अर्द्व मध्यम किसान (2–4)	2.59	2.59	2.76
मध्यम किसान (4–10)	5.12	5.15	5.90
बड़ा (10 से उपर)	15.0	18.50	17.33
औसत सभी का	0.43	0.39	1.57

स्रोतःकृषि गणना 2011–12 भारत सरकार

ऊपर के सारणी में यह देखा जा सकता है कि जोत का औसत आकार वर्ष 2005–06 से 2011–12 के बीच सीमांत किसानों का क्षेत्रफल में कमी आयी है यानी ऋणात्म वृद्वि हो रही है जो फसलों की उत्पादकता को प्रभावित कर रहा है। ष्शेष किसानों का औसत आकार या तो ज्यों का त्यों है या बढ़ा है लेकिन इनकी संख्या बहुत ही कम है। जिससे उत्पादकता पर कोई खास असर नही हो रहा है। अगर औसत सभी किसानों को मिलाकर देखा जाय तो उसमें भी पिछले 2005–06 से 2011–12 के बीच करीब 0.04 प्रतिषतकी कमी आयी है। अगर राष्ट्रीय औसत से तुलना करे तो बिहार का औसत बहुत ही कम है। छोटा जोत होने के कारण प्रदेष में मुख्य रूप से सीमांत एवं छोटे किसानों को खेती में नई तकनीक, अधिक उपज देने वाली किस्में, उर्वरक, सिंचाई आदि का उपयोग करने में कठिनाई आती है ।

जोत की संख्या एवं किसान वर्गवार विभाजन का बिहार एवं भारत के साथ तुलनात्मक अध्ययन से निम्नलिखित बातें सामने आती है ।

सारणीः बिहार एवं भारत में किसान वर्ग के अनुसार जोतों का प्रतिषत (2011–12)

किसान वर्ग	बिहार	भारत
सीमांत	90.80	67.04
लघु	5.90	17.93
अर्द्व मध्यम	2.70	10.04
मध्यम	0.60	4.25
वृहत्	0.10	0.74

स्रोतःकृषि गणना 2011–12 भारत सरकार

बिहार एवं भारत में जोतों की संख्या का विवरण (संख्या)

वर्ष	बिहार	भारत
1995–96	11574000	115579000
2001–02	14155000	119931000
2005–06	14657000	129222000

2010–11	16191000	137757000
2014–15	17625000	146292000

उपर्युक्त सारणी ये दर्षाते हैं कि बिहार एवं भारत में सीमांत एवं लघु किसानों का प्रतिषत अधिक है तुलनात्मक रूप से मध्यम एवं वृहत किसान वर्ग से। भारत में एवं बिहार में वर्ष 1995–96 से 2014–15 के बीच जोतों की संख्या बढ़ती रही है जिसका मुख्य कारण जनसंख्या में वृद्धि होना है एवं संयुक्त परिवार का टुटना ।

7.5 राज्य की प्रमुख फसलों का क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता और राष्ट्रीय स्तर से तुलनात्मक अध्ययन

बिहार राज्य चार कृषि जलवायु क्षेत्रों में बँटा हुआ है। राज्य का कृषि क्षेत्र का विभाजन मुख्य रूप से मिट्टी, जल, वर्षा भूमि की बनावट एवं जलवायु के आधार पर किया गया है। इसी के फलस्वरूप इस राज्य में अनेक प्रकार की फसलें उगाई जाती है। इस राज्य में खाद्य एवं अखाद्य फसलों फसलक्षेत्र, उत्पादन एवं उत्पादकता में भारी विविधता है। खाद्य फसलों को प्रमुखता से उपजाया जाता है। नीचे के सारणी में फसल प्रतिरूप को दर्षाया जा रहा है :–

सारणीःबिहार राज्य का फसल प्रतिरूप वर्ष 2009–10 एवं 2013–14

फसल	फसल क्षेत्र बिहार		भारत
	2009–10	2013–14	2012–13
कुल खाद्यान्न	94.30	92.57	65.23
अनाजों	86.30	85.52	53.98
दालों (दलहनी)	8.00	7.37	11.25
तेलहन	1.90	1.74	13.05
रेशा फसलों एवं अन्य नगदी फसल गन्ना छोड़कर	1.90	1.73	8.09
गन्ना	1.90	3.64	2.38

स्रोत कृषि विभाग, बिहार सरकार, पटना

उपर के सरणी से यह ज्ञात होता है कि राज्य में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत कृषि क्षेत्र में कुल खाद्यान्न का क्षेत्र 92.57 प्रतिषत है वर्ष 2013–14 के आकड़े अनुसार जो कि वर्ष 2009–10 से थोड़ा कम हुआ है (94.30 प्रतिषत)। कुल खाद्यान्न में अनाजों का क्षेत्र अनुपात का प्रतिषत करीब 85–86 प्रतिषत है और दलहनी का 7–8 प्रतिषत । राज्य में नगदी एवं रेषा फसलों का अनुपात 6 प्रतिषत से भी कम है जो दर्षाता है कि यह राज्य खाद्यान्न उत्पादन में ज्यादा प्राथमिकता देता है। तुलनात्मक रूप से रेषा और नगदी फसलों के प्रारूप को देखने पर इसका मुख्य कारण खेत के छोटे जोत का आकार होना हो सकता है। राज्य में लघु एवं सीमान्त किसानों की संख्या एवं क्षेत्रफल अधिक है एवं जोत का आकार बहुत ही छोटा है। कमोवेष संपुर्ण भारत का फसल प्रतिरूप भी बिहार के जैसा ही है कुछ फसलों को छोड़कर।

राज्य में प्रमुख खाद्य फसलों जैसेः– गेहूँ ,चावल, मक्का, कुछ मोटे अनाज एव दालों को प्रमुख रूप से उत्पादन किया जाता है। प्रमुख व्यापारिक फसलों में मुख्य रूप से गन्ना, जूट, कपास (पटसन)तिलहन, चाय, तम्बाकू आदि फसलों को उगाया जाता है।

सारणीः बिहार में मुख्य फसलों का उत्पादन वर्ष 2009–10 एवं 2013–14 में (हजार टन)

	बिहार उत्पादन	

फसल	वर्ष (2009–10)	वर्ष (2013–14)	मिलियन टन भारत औसत (2010–12)
कुल खाद्यान्न	9616.28	15716.30	258.69
चावल	3640.16	6649.59	105.18
गेहूँ	4403.80	6134.68	94.28
मक्का	1544.44	2904.24	22.02
मोटा अनाज	1572.32	2932.03	41.47
कुल दालें	459.70	522.02	17.44
कुल तेलहन	140.60	157.17	31.34
कुल रेषा फसल	1271.00	1745.08	46.24
गन्ना	3443.70	12881.78	354.64

स्रोतः निदेषालय सांख्यकी एवं मूल्यांकन बिहार सरकार पटना एवं कृषि आर्थिक सर्वेक्षण

उपयुक्त सारणी से ज्ञात होता है कि बिहार राज्य में खाद्यान्न प्रधान प्रमुख रूप से उगाया जाता है। इसके अन्तर्गत चावल उत्पादन की दृष्टि से प्रमुख फसल है उसके बाद दूसरी फसल गेहूँ एवं मक्का है । मोटे अनाजों की उत्पादन भी अच्छी मात्रा में होती है। दाल भोजन का मुख्य अवयव होने के कारण इस राज्य में दाल का भी उत्पादन (चना, अरहर, खेसारी, मूँग, मसूर, उड़द, मटर आदि) अच्छी मात्रा में अधिकांषतः रबी एवं खरीफ अवधी में उत्पादित की जाती है । लगभग 522 हजार टन कुल दालों का उत्पादन प्रति वर्ष लगभग 12–13 लाख हेक्टेयर क्षेत्र से होता है । बिहार में तिलहन खाद्य फसल होते हुए भी व्यापारिक महत्व की फसल है। इसके अन्तर्गत तीसी, राई, सरसों, तिल आदि फसलें उगायी जाती है। अन्य रेषा फसलों का उत्पादन भी इस राज्य में होता है। गन्ना की खेती भी संपूर्ण बिहार में लगभग 1–3 लाख हेक्टेयर में करीब 12881 हजार टन उत्पादित की जाती है । अगर हम भारत के औसत तीन वर्षो का जायजा ले तो उत्पादन का एक ही जैसा प्रचलन प्रतीत होता है। चावल के बाद गेहूँ एवं मक्का दूसरा एवं तीसरा फसल उत्पादन की दृष्टि से है एवं नगदी फसलों का एक ही जैसा प्रचलन भारत एवं बिहार में है ।

सारणीः बिहार राज्य में मुख्य फसलों की उत्पादकता किलोग्राम प्रति हे0

फसल	बिहार			औसत	भारत
	2011–12	2012–13	2013–14	2011–14	2011–14
कुल खाद्यान्न	2794	2776	2595	2722	
कुल चावल	2463	2523	2110	2365	2416
गेहूँ	3049	2797	2855	2900	3145
कुल मोटे अनाज	3566	3868	3877	3770	2676
कुल दालें	989	1052	1044	1028	764

कुल तिलहन	1308	1431	1279	1339	1168
जूट	2079	2180	2571	2277	
भेस्ता	2226	2325	2746	2432	
गन्ना	51713	50896	49916	50842	71000

स्रोत निदेषालय सांख्यकी एवं मूल्यांकन बिहार सरकार पटना, आर्थिक सर्वेक्षण।

उपर्युक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि चावल एवं गेहूँ का उत्पादकता राष्ट्रीय औसत से बिहार का औसत पिछड़ा हुआ है। पुनः सारणी से यह ज्ञात होता है कि दलहन एवं तेलहन की उत्पादकता में बिहार राज्य, भारत के औसत उत्पादकता से आगे है लेकिन गन्ना के क्षेत्र में अभी और प्रगति करने की सम्भावना है । इस तरह हम कह सकते हैं कि बिहार कुछ फसलों के मामले में भारत वर्ष के औसत उपज के तुलना में अधिक है तो कुछ में कम। अभी और उत्पादकता को बढ़ाये जाने की सम्भावना है ।

सारणीः— बिहार राज्य में अनाजों का क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता का प्रचलन 1950—51 से 2011—12 तक

क्रमांक	वर्ष	क्षेत्रफल (लाख हे0)	उत्पादन (लाख हे0)	उत्पादकता (क्विंटल हे0)
1	1950—51	96.71	44.42	4.53
2	1960—61	93.66	74.19	7.92
3	1970—71	99.08	78.81	7.95
4	1980—81	100.25	99.11	9.89
5	1990—91	94.31	124.00	13.02
6	2000—01	70.19	116.82	16.64
7	2010—11	53.40	103.52	18.38
8	2011—12	61.70	172.42	27.94
9	2013—14	62.80	186.20	29.64

स्रोतःसांख्यकि एवं मूल्यांकन निदेषालय, बिहार सरकार,पटना

ऊपर के सारणी पिछले सात दषक में बिहार के अनाजों का क्षेत्रफल उत्पादन एवं उत्पादकता के प्रचलन को प्रदर्षित कर रहा है। बिहार राज्य सन् 2000 ई0 में दो भागों (झारखण्ड और बिहार) में बट गया । अगर हम अनाजों के क्षेत्रफल की विकास को देखे तो पायेंगें कि मामूली ऊपर—नीचे होने के वाबजूद राज्य में करीब 63 लाख हे0 में खेती हो रही है। लेकिन उत्पादन में बहुत तेजी से इस दौरान वृद्धि हुई है जिससे हम अन्न उत्पादन में आज अपने आप को आत्मनिर्भर है। ऐसा इसलिए हुआ है कि उत्पादकता में बहुत तेजी से बढ़ोत्तरी इस दौड़ान हुआ है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि बिहार में अनाजों के उत्पादन एवं उत्पादकता में विकास तेजी से हुआ है फिर भी आज बिहार की औसत उत्पादकता भारत से कम है जिसका मूल कारण राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में काफी असमानता होना है एवं अन्य कारण अगर सच्चे अर्थ में समझा जाय तो सन् 2010 तक की अवधि में बिहार राज्य में अनाजों के उत्पादन एवं उत्पादकता का विकास ठहराव के भंवर में फंसा था जो अब बड़ी ही द्रुत गति से आगे बढ़

रहा है। जो प्रदेष के अर्थव्यवस्था के लिए एक अनुकूल पक्ष कहा जा सकता है। आज भी सभी कृषि जलवायु क्षेत्र जो बिहार राज्य के अन्तर्गत है (कृषि जलवायु उपक्षेत्र ए ff एवं fffअ,fffब) में वास्तविक उपलब्धि उत्पादन क्षमता से उत्पादकता काफी कम है। अगर आगे के वर्षो में उत्पादन क्षमता को समुचित ढंग से बढ़ाया जाय तो इस प्रदेष में अनाजों के उत्पादन में करीब तीन गुणा बढ़ोतरी होने के आसार है। जिससे कृषि आय को बढ़ाया जा सकेगा है एवं बेरोजगारों को रोजगार के अवसर उपलब्ध हो सकेगा और कृषि उद्योग को बढ़ावा मिलेगा जिससे बेरोजगार लोागे को रोजगार के लिए अवसर पैदा होगा और बढ़ती हुई श्रमषक्ति के बोझ को कृषि से गैर कृषि क्षेत्र में हस्तांतरित किया जा सकेगा । इस कार्य हेतु तकनीकि, संस्थागत एवं वैज्ञानिक से जुड़े लोगों को पहल करने की जरूरत है ।

7.6 कृषि उत्पाद का विपणन

अर्थ : कृषि विपणन से अभिप्राय कृषि उपज की विक्री से है लेकिन विस्तृत अर्थ में इसके अन्तर्गत वे सभी क्रियाये सम्मिलित होती है जिनका प्रयोग कृषि उपज का कृषक के यहाँ से अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाने में किया जाता है। इन क्रियाओं में उपज को एकत्र करना, उनका श्रेणीकरण एवं प्रमाणीकरण करना, उन्हें बेचने के लिए मण्डी तक ले जाना तथा उनकी विक्री करना सम्मिलित है ।

कृषि उत्पाद के उपभोक्ताओं अथवा खरीदारों को मोटे तौर पर तीन कोटियों में बाँट सकते हैं। एक कोटि में वे उपभोक्ता आते हैं जो कृषि उत्पाद जैसेः– गेहूँ , चावल आदि का प्रत्यक्ष उपभोग करते हैं। दूसरी कोटि में वे लोग शामिल है जो कृषि उत्पाद को खरीदकर उन्हें मध्यवर्ती वस्तुओं के तौर पर इस्तेमाल करते हैं। तीसरी कोटि में वे लोग शामिल है जो निर्यात के लिए कृषि उत्पाद को खरीदते है ।

महत्व :– किसी भी उत्पादन कार्य को पूरा करने के लिए यह नितांत आवष्यक है कि उत्पादित वस्तु की विक्री की जाए। कृषि उत्पाद विपणन से अभिप्राय इस प्रकार के स्थान से भी है जहाँ उत्पादकों एवं खरीददारों को एकत्रित किया जाता है। इस स्थान पर कृषकों द्वारा उत्पादित वस्तु बेची जाती है एवं उन्हें अधिक से अधिक लाभ दिलाने का प्रयास किया जाता है। इसलिए कृषि विपणन का बहुत अधिक महत्व है क्योंकि विपणन ही निर्बल, दुर्बल एवं शक्तिहीन कृषक के मूल अस्त्र होते है जिनसे वे धनी, सम्पन्न एवं चतुर लोगों पर विजय प्राप्त कर सकते हैं ।

कृषि विपणन की वर्त्तमान व्यवस्था

कृषि उत्पाद के विपणन के निम्नलिखित माध्यम हैः–

1. **गाँवों में बिक्री करनाः–** किसान अपनी कृषि उत्पाद का एक बहुत बड़ा हिस्सा साहुकारों, महाजनों, व्यापारियों एवं गाँव में स्थित छोटे दुकानदारों को ही बेच देते हैं। इसके पीछे कारण यह है कि उन्हें तुरन्त धन की प्राप्ति हो जाती है। किसान सदैव मण्डियों की कुरीतियों से बचना चाहते हैं। इसलिए अपना कृषि उत्पाद गाँवों में ही विक्री कर देते हैं ।
2. **मेलों में बिक्री करनाः–** प्रायः यह देखा जाता है कि गाँवों में या उसके आसपास कृषि–उत्पादों के बिक्री हेतु मेले का आयोजन किया जाता है। किसान इन मेलों में अपनी उत्पाद को बेच लेते हैं ।
3. **मण्डियों में बिक्री करनाः–** प्रत्येक शहरों और कस्बों में कुछ मण्डियाँ स्थापित है जहाँ आस–पास के किसान अपनी उत्पाद को इन मण्डियों में लाकर बेच लेते हैं। शहरों एवं कस्बों में कुछ नियमित मण्डियाँ है एवं कुछ अनियमित मण्डियाँ है।
4. **व्यवस्थित मण्डियाँ :–** इस तरह के मण्डियों का निर्माण सरकार के द्वारा कानूनों के अन्तर्गत किया जाता है। इनका प्रबन्ध स्थानीय निकायों के द्वारा होता है। इसमें राज्य सरकार व्यापारियों, दलालों या कमीषन एजेन्टों और किसानों के प्रतिनिधि होते है। इन मण्डियों में सभी के हितों का ख्याल रखा जाता है। फिलहाल बिहार में इस तरह का मण्डी कार्यरत नहीं है।
5. **सहकारी नीतियों के माध्यम से बिक्री करनाः–** कृषि विपणन के दोषों को दूर करने के लिए सहकारी समितियाँ स्थापित की गई है। इस व्यवस्था के अनतर्गत सदस्य किसान अपनी कृषि उत्पाद को अपने क्षेत्र की सहकारी

समिति में बेचते है जहाँ इन्हें इनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त होता है। सहकारी समितियाँ एकत्रित कृषि उत्पाद को बड़ी–बड़ी मण्डियों में बेचती है ।

6. **सरकारी तंत्र को बिक्री करनाः–**सरकार के द्वारा भी कृषि उत्पाद का क्रय, क्रय केन्द्र स्थापित कर किया जाता है। इस कार्य में भारतीय खाद्य निगम, जूट निगम, कपास निगम आदि सहायता करते हैं। इन केन्द्रों पर किसान अपने कृषि उत्पाद को ले जाकर बेचते हैं ।

कृषि विपणन की विषेषताएँ

कृषि विपणन की निम्नलिखित विषेषताएँ होती है ।

1. कृषक एवं उत्पाद के क्रेता के हितों की रक्षा करना ।
2. अधिक से अधिक बाजार सूचनाएँ एकत्रित कर कृषकों तक पहुँचाना ।
3. कृषि उत्पाद संग्रह हेतु भण्डारण की उचित व्यवस्था करना ।
4. उचित मूल्य मिलने तक कृषि उत्पाद को अपने पास रखना ।
5. मध्यस्थों की संख्या कम से कम करना ।

कृषि विपणन क्रियायें

1. कृषकों से छोटी–छोटी मात्रा में उपज को एकत्रीत करना
2. उपज का वर्गीकरण जैसः–किस्म, अकार आदि करना ।
3. उपज का प्रमाणीकरण करना (वर्गो को निर्धारित करना)
4. उपज को समय उपयोगिता बढ़ाने के लिए भण्डारित करना ।
5. उत्पादन स्थान से उपभोक्ता तक उपज पहुँचाने के लिए परिवहन का प्रयोग करना ।
6. उपज का वितरण करना
7. आवष्यक धन एवं ऋण की व्यवस्था करना
8. जोखित विपणन कार्य में उठाना आदि

कृषि विपणन में शामिल होने वाले कार्यकता

1. ग्राम कचहरी
2. कमीषन एजेन्ट
3. आढ़तिया
4. दलाल
5. तौल करने वाला
6. बोरों को रखने एवं निकालने वाला
7. थोक व्यापारी
8. फुटकर व्यापारी

कृषि उत्पाद विपणन का दोष

कृषि उत्पादन एक बड़े भौगोलिक क्षेत्र में होता है। जिसको समुचित तरीके से एकत्र करना आज भी एक बड़ी समस्या है। खेत या क्षेत्र की उपज की मात्रा और कोटी में बड़ा अन्तर होता है। एक ही कृषि–पदार्थ की अनेक किस्में होती है जिसके लिए कोटियों के अनुसार श्रेणीकरण करना आवष्यक होता है। कृषि पदार्थ मूल्य के हिसाब से स्थान अधिक घेरता है जिससे परिवहन की समस्या होती है। कुछ कृषि पदार्थ बहुत जल्द नाषवान होते हैं इन्हें अतिषीघ्र मण्डियों में लाना आवष्यक होता है लेकिन इसकी मांग सालों भर होती है। उपर्युक्त सभी कारण कृषि विपणन के दोष के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं। इसी से आज भी बिक्री व्यवस्था में कई गम्भीर दाष दिखाई देते है जैसे :– गोदामों की कमी, क्रय, विक्रय के दोष पूर्ण तरीके, दोषमुक्त तौल का वाट, मध्यस्थों की अधिकता श्रेणीकरण और मानकीकरण का अभाव, मूल्य संबंधी जानकारी का अभाव, संगठन का अभाव, संस्थागत बिक्री का अभाव आदि है । जिससे कृषकों को अपनी उपज बेचते समय कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है।

कृषि विपणन में सुधार के उपाय

1. नियंत्रित मण्डियों की स्थापना करना जिससे मण्डियों में प्रचलित कपटपूर्ण व्यवहार का समापन हो सके ।
2. कृषि उत्पाद का श्रेणीयन एवं प्रमाणीकरण करना जिससे किसानों को ऊँची कीमत प्राप्त हो सके
3. ज्यादा से ज्यादा गाँवों एवं शहरों में सरकारी सहायता से भण्डारण की सुविधाएँ प्राप्त हो ।
4. बजार की गतिविधियो को किसानों तक शीघ्र पहुचाने की व्यवस्था हो ।
5. ग्रामीण यातायात का समुचित विकास हो एवं गाड़ियाँ उपलब्ध कराया जाय ।
6. कृषि मूल्य आयोग की सिफारिष इमानदारीपूर्वक लागु हो ।
7. ज्यादा से ज्यादा सहकारी विपणन की व्यवस्था ।
8. सुरक्षित गोदामो की व्यवस्था हो
9. मण्डी अनुसंधान सर्वेक्षण हो

सहकारी खेती

महात्मा गांधी ने लिखा है कि ''मेरा यह दृढ़ विष्वास है कि हम तब तक कृषि का पूरा लाभ नहीं उठा सकते जब तक कि हम सहाकरी खेती न करने लगें। क्या यह बात विवेकसम्मत प्रतीत नहीं होती कि एक गांव के सौ किसान परिवार जमीन को सौ हिस्सों में बांटने की बजाय मिलकर सामूहिक खेती करें और उससे प्राप्त आय को आपस में बांट लें ''

सहकारी कृषि का अर्थ

इस प्रकार की कृषि व्यवस्था जिसमें कृषक अपनी भूमि के स्वामी बने रहते है परन्तु खेती सम्बन्धित कार्य दूसरे लोगों के साथ मिलकर करते है और सम्पूर्ण व्यय एक कोष के द्वारा होता है। कुल उत्पादन को बेचकर जो आय प्राप्त होती है उसमें से कुल व्यय घटाकर जो रूपया है उसे सभी साझेदार मिलकर आपस में बाँट लेते है।

सहकारी कृषि की परिभाषाएँ

डा0 ओटो षिलर के अनुसार '' सहकारी कृषि कृषि व्यवस्था का वह रूप है जिसके अन्तर्गत भूमि का संयुक्त प्रयोग किया जाता है। योजना आयोग के अनुसार '' सहकारी कृषि के अन्तर्गत भूमि का एकत्रीकरण एवं संयुक्त प्रयोग होता है।

सहकारी कृषि की विषेषताएँ

1. भूमि के छोटे–छोटे टुकड़ों को एक स्थान पर एकत्रित करके खेतों को अकार में बढ़ा दिया जाता है ।

2. भूमि पर भु–स्वामी का अधिकार रहता है ।
3. आपस में सहयोग की भावना का जन्म होता है ।

सहकारी खेती की आवष्यकता

1. कृषि–जोत के आकार के दोष को समाप्त करने के लिए
2. बड़े पैमाने पर उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए
3. भूमि, पशु , सिंचाई के साधनों, उपकरणों एवं मानव शक्ति के सदुपयोग के लिए
4. कृषि आधारित उद्योगों को कच्चे माल मुहैया कराने के लिए
5. सामुहिक भावना के विकास के लिए
6. वैज्ञानिक पद्धति के विस्तार के लिए
7. आर्थिक सुरक्ष प्रदान करने के लिए
8. समाज में सद्भावना के विकास के लिए
9. रोजगार में वृद्धि के लिए

सहकारी खेती की विफलता के कारण

1. निरक्षरता और अज्ञानता
2. समाज में ऊँच–नीच की भावना
3. सहकारी नीति का अभाव
4. सरकारी तन्त्र का असहयोग
5. झुठी समितियों का गठन

सहकारी खेती के रूप

श्री आर0जी0.सरैया की अध्यक्षता में गठित सहकारी नियोजन समिति'' के अनुसार सहकारी कृषि व्यवस्था को चार भागों में बाँटा गया है ।

1. सहकारी काष्तकारी खेती

इस प्रकार की कृषि व्यवस्था में सहकारी समितियाँ भूमि खरीद लेती है या उसे पट्टे पर ले लेती है। उसके बाद भूमि सदस्यों को खेती करने के लिए दे दी जाती है। श्रमिक अपने–अपने श्रम का पारिश्रमिक पाते है। सहकारी समिति ऋण, बीज, खाद व उपकरण मुहैया करवाती है एवं सदस्यों के उपज का विक्रय करती है। श्रमिक के बल काष्तकार के रूप में कार्य करते हैं।

2. सहकारी उन्नत खेती

इसमें केवल भू–स्वामी अपने खेतों को उन्नतिषील बनाने के लिए समिति बनाते है। इसमें भू–स्वामी का स्वामित्व बना रहता है। समिति का केवल इतना कार्य होता है कि वह आवष्यकतानुसार किसानों को अच्छी खाद, उन्नत बीज आदि मुहैया करती है। इसके लिए किसानों को समिति की सेवाओं के बदले में समिति को राषि देनी पड़ती है।

3. सहकारी संयुक्त खेती

यह व्यवस्था व्यक्तिगत स्वामित्व एवं सामूहिक परिचालन पर आधारित है। इसमें कृषक छोटी–छोटी जोतो को एक स्थान पर एकत्रित करके कृषि करते है। प्रत्येक सदस्य का स्वामित्व बना रहता है। अतिरिक्त खेती में किये गये परिश्रम के बदले अलग से पारिश्रमिक दिया जाता है।

4. सहकारी सामूहिक खेती

इस व्यवस्था में भूमि का प्रबन्ध सामूहिक रूप से किया जाता है। इसमें समिति या तो भूमि खरीद लेती है या पट्टे पर ले लेती है। समिति के सदस्य श्रमिक के रूप में कार्य करते है। वर्ष के अन्त में जो लाभ होता है उसे श्रम के आधार पर श्रमिकों को बाँट दिया जाता है ।

सहकारी खेती के लाभ

सहकारी खेती वर्त्तमान अर्थव्यवस्था के लिए सबसे उपयुक्त विधि है। इसके द्वारा खेती के उप–विभाजन एवं अपखण्डन की समस्या को दूर किया जा सकता है। इस प्रणाली के अन्तर्गत शक्ति, पूँजी एवं भूमि को एक रूप में लाकर उसका अधिकतम प्रयोग किया जा सकता है। इसके द्वारा अधिकतम उत्पादन कम लागत पर प्राप्त हो सकता है। इसके अलावा पूँजी निर्माण में वृद्वि, आर्थिक सुरक्षा, साधनों का सदुपयोग, व्यापक पैमाने पर उत्पादन, विपणन व्यवस्था में सुधार एवं समाजिक लाभ अर्जित किया जा सकता है।

सहकारी खेती से हानियाँ

इस प्रणाली के अन्तर्गत खेती बड़े पैमाने पर की जाती है तथा ज्यादा से ज्यादा आधुनिक तथा वैज्ञानिक यन्त्रों का प्रयोग होता है जिससे खेती मानव प्रधान न होकर यन्त्र प्रधान हो जाता है। अतः बेरोजगारी की समस्या का समाधान न होकर और समस्याएँ खड़ी होने की आषंका है। गाँवों में किसान मुकदमें, स्वार्थ एवं क्लेष की भावना से ग्रसित है ऐसी स्थिति में सहकारीता का पनपना कठिन है क्योंकि सहकारी कृषि केवल सहकारिता पर ही निर्भर करती है ।

बिहार राज्य मुख्यतः कृषि प्रधान राज्य है। इस राज्य की ग्रामीण जनसंख्या कुल जनसंख्या का 89 प्रतिषत से अधिक है। इसलिए राज्य के सर्वांगीण विकास के लिए गाँच के लोगों को आर्थिक एवं समाजिक विकास करना अनिवार्य है। इसी दृष्टि से ग्रामीण जनता को शोषण मुक्त करने के उद्देष्य से सहकारिता का जन्म हुआ था। कालान्तर में यह आन्दोलन राज्य के विकास के साथ–साथ सहकारिता के क्षेत्र, उसके कार्य–कलाप एवं सांगठिनक स्वरूप में भी विकास हुआ है। आज प्रदेष के कुल परिवारों में करीब 60 प्रतिषत से अधिक सहकारिता से जुड़े हुए है।

अनुबंध खेती

देष में अनुबंध खेती का मौजूदा दौर लगभग वर्ष 1989 में पंजाब में होषियारपुर में पेप्सी फूड लिमिटेड द्वारा टमाटर संसाधन संयंत्र की स्थापना के साथ शुरू हुआ ।

अनुबंध खेती मूल रूप से तो उत्पादक किसानों तथा कार्यकर्ता कंपनियों, ग्राहकों के बीच अग्रिम अनुबंध के तहत एक निर्धारित मूल्य पर कृषि, वागवानी आदि उत्पादों के उत्पादन आपूर्ति विक्रय की एक व्यावसायिक व्यवस्था है। इसमें उत्पादक किसान एक निष्चित मात्रा में कृषि उत्पादों को निष्चित समय पर कंपनियों, अनुबंध करने वाले फार्मो एवं ग्राहकों को उपलब्ध कराते हैं तथा खरीदकर पूर्व निर्धारित मूल्य देकर उत्पाद को अधिग्रहित करते हैं ।

खाद्यान्न उत्पादन जहाँ पिछले कुछ दषकों में तेजी से बढ़ा है फिर भी अभी चुनौतियाँ खत्म नहीं हुई है। हाल के वर्षो में किसान कॉट्रेक्ट फार्मिग जिसे अनुबंध खेती भी कहते है उससे जुड़े है एवं जुड़ रहे हैं। इस कारण से भी कृषि उत्पादकता बढ़ी है। आंकड़े बताते है कि भारत में वर्ष 1951 में मनुष्य भूमि अनुपात 0.48 हेक्टेयर प्रति व्यक्ति था जो एक आकलन के अनुसार यह आंकड़ा वर्ष 2025 तक घटकर सिर्फ 0.23 हेक्टेयर होने का अनुमान है। बिहार का हाल तो और भी बुरा है। इन दिनों अनुबंध की खेती को बढ़ावा देने पर इसलिए भी बल दिया जा रहा है। दरअसल अनुबंध खेती की जरूरत महसूस इसलिए की गई ताकि फसल की बर्बादी रोकी जा सके और किसान

को भी उनके उत्पाद की मुनासिब कीमत मिल सके। सरकार ने पहले से ही केन्द्रीय कृषि नीति में अनुबंध खेती के क्षेत्र में निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ावा देने का ऐलान किया था। दरअसल कांट्रैक्ट और अनुबंध खेती का मकसद फसल उत्पाद के लिए तयषुदा बाजार तैयार करना था। इसके अलावा कृषि के क्षेत्र में पूँजी निवेष को बढ़ावा देना भी अनुबंध खेती का उद्देष्य है। इसके बाद कृषि उत्पाद के कारोबार में लगी कई कॉर्पोरेट कंपनियों ने कांट्रैक्ट खेती के सिस्टम को इस तरह सुविधाजनक बनाने की कोषिष की जिससे उन्हें अपनी पसंद का कच्चा माल तय वक्त पर और कम कीमत पर मिल जाए। अनुबंध खेती में उत्पाद और खरीदार के बीच कीमत पहले ही तय हो जाती है। फसल की क्वालिटी, मात्रा और उसकी डिलीवरी का वक्त फसल उगाने से पहले ही तय हो जाता है। अनुबंध खेती के दौरान खेती का अनुबंध देने वाला किसान को खाद, कीटनाषक आदि जरूरतों के साथ खेती की तकनीकी सलाह भी मुहैया कराया जाता है। इसमें किसानों के खेती के लिए फाइनेंस उपलब्ध करवाने का इन्तजाम भी होता है। एक जानकारी के मुताबिक अनुबंध खेती से किसानों को खुले बजार के मुकाबले 20 से 25 प्रतिषत ज्यादा मुनाफा होता है। यही वजह है कि बदलते वक्त के साथ अनुबंध खेती का चलन भी बढ़ता जा रहा है। बिहार में भी किसान विगत कई सालों से विभिन्न कंपनियों के लिए फसल उगा रहे है।

किसानों को अनुबंध खेती से फायदा

1. किसानों को उत्पाद अनुबंध करनेवाला कम्पनी या व्यक्ति गुणवता के आधार पर पुरा उत्पाद को खरीद लेता है ।
2. किसानों को व्यापक रूप से प्रबंधन, तकनीकी एवं प्रसार का सेवा प्राप्त होता है।
3. किसानों को उत्पादन में लगने वाले कारक और उत्पादन सेवा प्राप्त होता है ।
4. ऋण सुगमता से प्राप्त होता है ।
5. कृषि कार्य में दक्षता आता है ।
6. उत्पाद का नियत एवं तय मूल्य प्राप्त होता है ।
7. सुविधा जनक बाजार की उपलब्ध होता है ।

किसानों को अनुबंध खेती से नुकसान

1. कृषि में जोखिम बढ़ जाता है ।
2. इनके उत्पाद को गुणवता में कम आका जाता है ।
3. धांधली होता है इनके साथ
4. एक ही फसल का वार्चस्व होता है ।
5. उनके हित का फसल नहीं होता है ।

मूल्य श्रृंखला का तात्पर्य मूल्य का जुड़ना है। विभिन्न विपणन प्रक्रिया एवं उत्पादन के प्रक्रिया में एक प्रतिस्पर्धा का उत्पन्न करना। मूल्य श्रृंखला में उत्पादन में लगने वाले वस्तुओं, आता हुआ इंपुट वितरण, तैयार करने की क्रिया, जाता हुआ आउटपुट वितरण, विपणन एवं बिक्री क्रिया और बिकने के बाद की क्रिया होता है जिसको खरीदना, अनुसंधान, मानव संसाधन का विकास एवं औद्योगिक इंफरास्ट्रक्चर के द्वारा सहायता प्रदान किया जाता है। उपर्युक्त सभी क्रिया का समेकित प्रयोग करके हम समेकित मूल्य एवं श्रृंखला को विकसित करते हैं एवं इससे उत्पादक एवं उपभोक्ता को अधिक से अधिक लाभ पहुँचा सकते हैं ।

पहले हम यही देखते थे कि वस्तुओं को उत्पादन स्थल से अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचने में अनेक तरह के मूल्य उस उत्पादित वस्तु पर लगते हैं और उत्पादीत वस्तु कृषकों एवं अन्य विपणन मध्यस्थों द्वारा किए जाने वाले व्यय एवं उनके लाभ का धन राषि उस वस्तु में जुड़ता जाता है। लेकिन अब विपणन प्रक्रिया में मूल्य, कृषकों, विभिन्न विक्रय मध्यस्थों जैसे खुदरा व्यापारी, थोक व्यापारी, गाँव का व्यापारी के द्वारा वृद्वि होता है। इस व्यवस्था में अनेकों मूल्य से जुड़ी कार्यो जैसेः– श्रेणीकरण, मानवीकरण,परिश्करण, परिवहन, संग्रहण, पैकेजिंग, विज्ञापन आदि लागत लगते हैं जो एक मूल्य श्रृंखला का रूप ले लेता है। इस प्रक्रिया में कृषकों को उत्पाद के विक्रय मूल्य में से कम अंष प्राप्त होता है एवं उपभोक्ताओं को अधिक कीमत चुकाना पड़ता है

किसान वर्ग फसलों को उगाने में आगतों का उपयोग करते हैं जो कि कारखानों में उत्पादित होता है और विभिन्न माध्यमों से उनके पास पहुँचता है जिसमें अनेकों तरह के मूल्य का व्यय होता है। पुनः जब किसान उत्पादन करते हैं और उत्पाद को उपभोक्ता तक पहुँचाने में अनेकों तरह के मूल्य उसमें जुड़कर उन तक पहुँचता है। जितना ज्यादा श्रृंखला उत्पादक से उपभोक्ता तक उत्पाद को पहुँचाने में लगते हैं सब पर मूल्य जुड़ता जाता है इससे इस क्रिया में जुड़े सभी लोगों पर बड़ा ही प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है इसलिए समेकित मूल्य श्रृंखला की धारण पिछले दो दषको में विकसित हुआ है एवं इसका लाभ भी हो रहा है फिर भी आवष्यकता है उचित समीश्रण कर और कारगर बनाने का है।

अतः समेकित मूल्य श्रृंखला आज के युग में अत्यन्त आवष्यक है इसमें सभी तरह के लोगों जो इस कार्य में लगे है उनका भला हो सकता है। उचित समीश्रण (कारखाने, थोक विक्रेता, खुदरा विक्रेता, किसान एवं उपभोक्ता) कर के अधिक से अधिक फायदा लिया जा सकता है ।

औद्योगिक खेती

कृषि की समुन्नति द्वारा आर्थिक प्रणाली आर्थिक विकास की निष्चित सीमा तक ही पहुँच सकती है। आर्थिक विकास की उच्च अवस्था तथा औद्योगिक प्रगति सिर्फ औद्योगिक खेती के द्वारा ही सम्भव हो सकता है। चूँकि कृषि प्रधान होने के वावजूद भी बिहार अभी भी अल्पविकसित है। इसके लिए औद्योगिक खेती की जरूरत है क्यों कि औद्योगिक खेती एक ऐसी खेती है जिसमें नगदी फसलों एवं जानवरों को एक छोटे से बन्द क्षेत्र में उत्पादित कर ज्यादा से ज्यादा मात्रा में अंडा, मीट, दूध एवं अन्य औषधीय उत्पादन सस्ते से सस्ते दर पर किया जा सकता है। इससे औद्योगिक प्रगति का रास्ता बनेगा एवं धन एवं श्रम को उपार्जित किया जा सकेगा। इस तरह के खेती से कृषि क्षेत्र में बेरोजगार श्रम शक्ति को लाभप्रद रोजगार भी दिलाया जा सकता है इससे कृषि एवं औद्योगिक विकास निरंतर होता रहेगा ।

प्रश्नावली

अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

(1) बिहार में लगभग ..... प्रतिशत वन क्षेत्र है।

(2) बिहार में फसल तीव्रता ..... प्रतिशत है।

(3) राज्य के ..... में खेती सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) बिहार राज्य बाढ़ एवं सुखाड़ दोनों आपदाओं को झलेता है, कैसे?

(2) जनसंख्या घनत्व का राज्य की अर्थव्यवस्था पर प्रभाव। केवल महत्वपूर्ण बिन्दुओं का उल्लेख संक्षेप में करें।

(3) आँकड़ों में सीमान्त एवं लघु किसान का विवरण प्रस्तुत करें।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) कृषि उत्पादन विपणन के दोष एवं सुधार के उपायों का विवरण प्रस्तुत करें।

(2) सहकारी खेती पर प्रकाश डालें।

(3) अनुबंध खेती का विवरण प्रस्तुत करें।

② ② ②